विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१

पोस्टल रजि. नं. NSK-64

वर्ष ९ • बम्बई • बुद्धवर्ष २५२३ • मार्गशीर्ष/पौष पूर्णिमा [शक] • दि. २-१-१९८० • अंक ६-७

उदान (८)

सुखी सुरक्षित

(क)

सिद्धार्थ गौतम को सम्यक् सम्बोधि प्राप्त हुई। धर्मचक्र प्रवर्तन हुआ। थोथे कर्मकांड, निरर्थक दार्शनिक वाद-विवाद एवं जाति-पांति व सम्प्रदायगत संकीर्णता से दूर सार्वजनीन, सार्वदेशिक, सार्व कालिक धर्म का सर्वमंगलकारी स्वरूप लोक में प्रसारित होने लगा। सभी वर्ग-वर्ण, कुल-गोत्र के लोग शुद्ध धर्म की चुम्बकीय शक्ति की ओर आकृष्ट होकर खिंचे आने लगे। धर्म-संघ संवर्धित होने लगा।

उन दिनों भगवान मगध की राजधानी राजगृह में मगधराज श्रेणिक बिम्बसार द्वारा प्रदत्त वेणुवन में विहार कर रहे थे। तब पिता शुद्धोदन द्वारा बार-बार दूत भेजकर आमंत्रित किए जाने पर भगवान कपिलवस्तु गए। प्रारंभिक हिचक के बाद अनेक शाक्यवंशीय राजपुत्र प्रव्रजित हो धर्मसंघ में सम्मिलित हुए। भगवान कुछ दिन कपिलवस्तु में विहारकर समग्र भिक्षुसंघ सहित समीपवर्ती मल्लदेश के अनूपीय आम्रवन की ओर चल दिए।

उस युग में कपिलवस्तु में गणराज्य था। गणसभा के सभी सभासद राजा कहलाते थे। उनमें से किसी एक को निश्चित अवधि के लिए कार्यवाहक शासक चुन लिया जाता था। सभी राजा मिल-जुलकर शासन के नियमों का संविधान करते और कार्यवाहक राजा उन नियमों के अनुसार प्रजा को अनुशासित करता था। उन दिनों कालीगोध का पुत्र भद्दिय कार्यवाहक राजा था। अन्य अनेक सभासद राजाओं में से एक राजा था शाक्य महानाम जो कि खेती-बाड़ी करके जीविकोपार्जन करता था। महानाम का छोटा भाई था अनुरुद्ध जो कि बड़े भाई और माता के लाड़-प्यार में पला हुआ सुख-समृद्धि का जीवन बिताता था।

एक दिन महानाम शाक्य के मन में यह आया कि सभी राज परिवारों से अनेक सदस्य शाक्यसिंह भगवान बुद्ध के संघ में सम्मिलित हो रहे हैं। क्यों न मैं भी सारा धन-धान्य और काम-धंधा छोटे भाई अनुरुद्ध के हवाले करके स्वयं प्रव्रजित हो, उनका साथ दूं। इस संबंध में दोनों भाईयों में परस्पर बात-चीत हुई। अन्ततः महानाम को घर संभालने के लिए रहना पड़ा। अनुरुद्ध प्रव्रजित होने के लिए कृतसंकल्प हुआ। इस निमित्त वह जब अपनी माँ से आज्ञा लेने गया तो माँ व्यथित हुई। पुत्र-वियोग उसके लिए असह्य था। अनुरुद्ध को अत्यंत दृढ़संकल्प देखा और उसे रोकने का अन्य उपाय नहीं सूझा तो उसने इस शर्त पर अनुमति दी की राजा भद्दिय तेरे साथ प्रव्रजित हो तो भले तू भी हो जा। वह जानती थी कि एक तो शासन की जिम्मेदारियों के कारण और दूसरे शासक को मिली विशेष सत्ता व सुविधा की आसक्तियों के कारण भद्दिय कदापि प्रव्रजित नहीं होगा। परन्तु भद्दिय अनुरुद्ध का बचपन का धूल-खेला घनिष्ठ मित्र था। अतः अनुरुद्ध ने यह शर्त झट स्वीकार कर ली। उसे पूरा विश्वास था कि अंतरंग मित्र भद्दिय उसकी बात नहीं टालेगा। धर्मपथ पर उसका साथ देगा। मानस में सफलता की उमंग लिए हुए और कदमों में गृहत्याग की त्वरा लिए हुए वह राजमहल की ओर गया और राजा भद्दिय से मिलकर बोला, "मित्र भद्दिय! मैं प्रव्रज्या के लिए अत्यंत आतुर हूं, संवेगग्रस्त हूं। परन्तु मेरी प्रव्रज्या का होना न होना तेरे आधीन है।"

शाक्यराज भद्दिय ने कहा... "सौम्य अनुरुद्ध! यदि तेरी प्रव्रज्या मेरे आधीन है तो मैं तुम्हें इस आधीनता से मुक्त करता हूं। प्रसन्नता से प्रव्रजित होओ।"

धम्म वाणी

सोज्ज भद्दो अनुत्रासी, पहीनभयभेरवो।
झायति वनमोगय्ह, पुत्तो गोधाय भद्दियो॥
सीलक्खन्धे पतिट्ठाय, सतिं पञ्ञं च भावयं।
पापुणिं अनुपुब्बेन, सब्बसंयोजनक्खयं॥

थेरगाथा-८६४/८६५

वही गोधाय पुत्र भद्दिय (जो गढ़-महलों में खड्गहस्थ अंग-रक्षकों से घिरे रहने पर भी संत्रस्त और भयभीत रहता था) आज (सही माने में) भद्र हुआ, त्रासरहित, भयरहित हुआ, वन में प्रवेश कर ध्यान करता है। वह शील-सदाचार में पूर्णतया प्रतिष्ठित है। स्मृति (जागरूकता) का प्रयत्न करता हुआ, भावनामयी प्रज्ञा के अनुपूर्वी निरंतर अभ्यास से क्रमशः सभी बंधनों की क्षय अवस्था को प्राप्त हुआ है।

इस पर अनुरुद्ध ने सारी बात समझाते हुए कहा, "मैं तुम्हारे बिना प्रव्रजित नहीं हो सकता।"

शाक्यराज भद्दिय घर से बेघर होकर प्रव्रजित होने के लिए तैयार नहीं था। परन्तु वचनों में बंध चुका था। बिना पूरी बात सुने-समझे ही उसने वचन दे दिया था कि "यदि तेरी प्रव्रज्या मेरे आधीन है तो मैं तुम्हे इस आधीनता से मुक्त करता हूं।" आधीनता से मुक्त होने का अर्थ था कि अनुरुद्ध की माता की शर्त पूरी करना याने स्वयं भी प्रव्रजित होना। उन दिनों लोग सत्यवादी होते थे। वचन निबाहने वाले होते थे। इक्ष्वाकुवंश के लोग तो इस क्षेत्र में अधिक प्रसिद्धि-प्राप्त थे। अतः प्रव्रजित होने का धर्मसंवेग न होते हुए भी शाक्यराज भद्दिय अनुरुद्ध के साथ मल्लप्रदेश के आम्रवन में, जहां भगवान बुद्ध विहार कर रहे थे वहां पहुंचकर प्रव्रजित हुआ और उनके धर्मसंघ में सम्मिलित होकर विपश्यना साधना में रत हो गया। समय पाकर अनुरुद्ध की भांति वह भी अर्हत पद को प्राप्त हुआ, जीवनमुक्त हुआ।

स्थविर भद्दिय अरण्य के किसी खुले स्थान में, रुक्खमूल पर अथवा किसी एकांत ध्यानकक्ष में— जिसे उन दिनों की भाषा में सुन्नागार कहा जाता था— ध्यान करता, विपश्यना भावना करता, अध्यात्म में याने अपने भीतर ऐन्द्रियजन्य संवेदनाओं की वेदना-नुपश्यना करता; अतीन्द्रिय संवेदनाओं का प्रीतिप्रमोदपूर्ण दर्शन करता और फिर इंद्रियातीत निर्वाण का साक्षात्कार कर **'निब्बाणं परमं सुखं'** तथ्य अनुभव करता और उस निर्वाणिक स्थिति के पश्चात् देर तक भीतर ही भीतर जिस शीतल शांति से तन-मन आप्लावित रहता, तब इस धर्म साधना के प्रति विह्वल होकर पुलकरोमांच से भर उठता। कभी-कभी आँखोंसे अश्रुधारा बह चलती। आनंदातिरेक की ऐसी अवस्था में उसके मुंह से सहसा हर्षोद्गार निकल पड़ते— 'अहो सुखं! अहो सुखं!'

बड़ा अंतर है ऐंद्रिय सुख और अतीन्द्रिय नैर्वाणिक सुख में! एक भ्रम, भ्रांति, आभास मात्र! दूसरा यथार्थ, वास्तविक! निर्वाण का सुख सूक्ष्म से सूक्ष्म ऐंद्रिय सुख से भी परे! अतुल, अनुत्तर, अद्वितीय, अनुपम, अप्रमेय! वर्णनातीत, व्याख्यातीत, शब्दातीत! गूंगे का गुड़! जो चखे सो ही जाने। कोई कैसे बखाने? बखाने तो हर शब्द भ्रामक ही भ्रामक साबित हो।

तभी तो वे साधक भिक्षु जो कि अभी आर्य नहीं हो पाए थे, जो साधना पथ के पथिक तो थे, पर ऐसे अनुपम अमृतरस का स्वयं आस्वादन नहीं किया था— इस 'अहो सुख! अहो सुख!' का क्या अर्थ करते? उनके लिए इंद्रिय सुख ही सुख था। अतः वे जब कभी स्थविर भद्दिय को नम-नयन 'अहो सुख! अहो सुख!' कहते सुनते तो उन्हें लगता पूर्व समय का राजा भद्दिय, मित्र अनुरुद्ध से वार्तालाप में वचनबद्ध हो जाने के कारण, बिना मन के घर से बेघर हुआ है। अतः खिन्न मन है। कहां वह महलों का वैभव-विलास और कहां यह भिक्षु का अभावग्रस्त शुष्क जीवन? कहां वह प्रवृत्ति-मय रंग-रलियां और कहां यह निवृत्तिमय त्याग तप? कहां वह नौकर-चाकर, राज्यपरिषद और चतुरंगिनी सेना पर हुकूमत का रुआब-दबाव और कहां यह दर-दर भिक्षाटन का जीवन? अवश्य राजा भद्दिय भीतर ही भीतर अत्यंत दुःखी है और अपने विगत वैभव को याद करके 'अहो सुख! अहो सुख!' का उच्चारण करता और ठंडी आहें भरता रहता है।

बात भगवान तक पहुंची। भगवान वस्तुस्थिति जानते थे। अतः शिकायत करने वाले भिक्षुओं के सामने ही स्थविर भद्दिय को बुलाकर प्रश्न किया ताकि उनकी भ्रांति दूर हो।

स्थविर भद्दिय ने उत्तर दिया— "भन्ते भगवान! यह सच है कि मुझे अपना पुराना जीवन स्मरण होता है। और अबके जीवन से उसकी तुलना करता हूं तो स्वभावतः मुख से "अहो सुख! अहो सुख!" निकल पड़ता है। भन्ते भगवान! जब मैं कपिलवस्तु गण-राज्य का कार्यवाही राजा था तो मेरे अन्तःपुर के भीतर-बाहर, नगर के भीतर-बाहर, समस्त जनपद के भीतर-बाहर, कड़ा पहरा रहता था। यह सारा पहरा मेरी आरक्षा-सुरक्षा के लिए था। परंतु वह भी कैसी सुरक्षा थी कि जिसके बने रहने पर भी सर्वदा अपने आपको असुरक्षित ही महसूस करता था। सदा भयभीत, सशंकित, सदा उद्विग्न, संत्रस्त। और अब भगवान! अरण्य में किसी वृक्ष के मूल पर, किसी शून्यागार में सर्वथा अकेला रहकर ध्यान करता हूं तो सचमुच कितना सुरक्षित महसूस करता हूं। कितना निर्भय! कितना निःशंक! कितना अल्पेच्छु! कितना शांत! कितना सुखी! ऐसी अवस्था में स्वभावतः हर्षवचन निकल पड़ते हैं— 'अहो सुख! अहो सुख!'

धन्य है विपश्यनाजन्य समता का महासुख! धन्य है निर्वाण अवस्था का परमसुख!

विपश्यना समता के लिए ही तो है। निर्वाण के लिए ही तो है। महासुख, परमसुख के लिए ही तो है। जीवन में जब-जब अनचाही होती है अथवा मनचाही नहीं हो पाती तब-तब हम कुपित हो उठते हैं और परिणामस्वरूप दुःखी हो उठते हैं। किसी वस्तु अथवा स्थिति को प्राप्त किया चाहते हैं, उसकी चाह में तृषित-त्रसित बने रहते हैं। जब तक प्राप्त न हो तब तक अभाव में असुरक्षित महसूस करते हैं। उद्विग्न, उत्तेजित रहते हैं। प्राप्त हो जाय तो उसे कायम रखने के लिए आतुर हो उठते हैं। सोचते हैं इसके बिना सुरक्षित कैसे रहेंगे? अतः इस 'मेरी' की सुरक्षा में 'मैं' की सुरक्षा मानकर 'मेरी' को कायम रखने की जी-तोड़ मेहनत करते हैं और आरक्षण की बाड़ लगाते हैं। उजड़ने के भय से रात की नींद, दिन का चैन गंवाते हैं। अभाव में भी दुखी, भाव में भी दुखी। किसी मनचाही के न होने से भी दुखी, हो जाने से भी दुखी। न होने पर न होने का दुःख। होने पर उसे कायम रखने के प्रयास का दुःख। कायम न रख सके तो फिर खो देने का दुःख। दुःख ही-दुःख! दुःख ही दुःख। इस दुःख का निरोध ही तो विपश्यना-पथ है।

विपश्यना के अभ्यास में साधक क्या करता है? अन्तर्मुखी होकर शरीर स्कंध के भीतर-बाहर चेतना के स्तर पर अनचाही-मनचाही संवेदनाओं की अनुभूति करता है। पूर्व संस्कारों के दूषित स्वभाव के कारण अनचाही को दूर करने की, मनचाही को कायम रखने की, समेटे रखने की, बार-बार भूल करता हुआ भी बीच-बीच में दोनों के ही अनित्यधर्म को समझता है और प्रज्ञापूर्वक समता में स्थिर होता

है। इस प्रकार शनैः शनैः उस अवस्था की ओर बढ़ता जाता है जहां अभाव के कारण अथवा भाव के छूटने के कारण मन कुपित-कुंठित नहीं होता। सफलता-विफलता, उत्कर्ष-अपकर्ष आदि के अवाभवरूपी सुख-दुःखमय द्वंन्दों से पार हो जाता है और उस अवस्था पर जा पहुंचता है जहां सुरक्षा ही सुरक्षा है, निर्भयता ही निर्भयता है, शोकहीनता ही शोकहीनता है। सही अर्थ में सुख ही सुख है। ऐसे महासुख, परमसुख को कोई प्रत्यक्ष अनुभवी ही समझ सकता है। जो स्वयं इस अवस्था को प्राप्त नहीं हुए हैं वे बहुज्ञ देव भी इसे नहीं समझ सकते। शिक्षाग्राही सामान्य साधकों को तो भ्रम होना ही था।

भिक्षु भद्दियकी इस ऊंची अवस्था को देखकर ही उस समय भगवान के मुंह से उदान के ये शब्द निकले :-

यस्सन्तरतो न सन्ति कोपा,
इतिभवाभवतं च वीतिवत्तो।
तं विगतभयं सुखिं असोकं,
देवा नानुभवन्ति दस्सनाया ॥

"जिसके अन्तरतम में कहीं कोप नहीं रह गया। जो भव और अभव के सारे द्वंदों को पार कर गया, वह इस अवस्था पर पहुंच गया, जहां अभय, अशोक और सुखी ही रहता है। उस अवस्था को प्राप्त हुए मुक्त व्यक्ति को देवता भी नहीं समझ सकते।"

साधको! कठिन है उस ऊंची अवस्था तक पहुँचना जहां सही सुरक्षा प्राप्त हो जाय, सही सुख प्राप्त हो जाए! पर असंभव नहीं है। धैर्य-धीरज के साथ अनुपुब्बी याने क्रमशः अभ्यास द्वारा इस मंगल-पथ पर एक-एक कदम बढ़ते चलें और अपना मंगल साधते चलें। देर-सबेर अंतिम लक्ष्य तक पहुंचेंगे ही। जितने-जितने कदम चलेंगे उतना-उतना मंगल सधेगा ही।

मंगलमित्र,
स. ना. गो.

इगतपुरी में स्वयं-शिविर

क्रमांक ५५ दि. २-१-८० से १३-१-८० तक

संपर्क : व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३. (नासिक-महाराष्ट्र) फोन नं. ७६.

सूचना : १) स्वयं-शिविर में केवल वे **पुराने साधक** ही सम्मिलित हो सकेंगे जो कि विद्यापीठ की अनुशासन-संहिता का आत्मविश्वास के साथ कड़ाई से पालन कर सकें।

२) कोई साधक यदि पूरे शिविर में सम्मिलित न हो सके तो वह अपनी सुविधानुसार बीच में कम दिनों के लिए भी सम्मिलित हो सकता है।

३) प्रत्येक अवस्था में आवश्यक है कि व्यवस्थापक से अपना स्थान सुरक्षित रखने की पूर्व स्वीकृति प्राप्त कर लें।

४) यथासंभव हर शनिवार तथा रविवार के दिन पू. गुरुजी धम्मगिरि पर उपस्थित रहेंगे। अतः साधक उनका मार्गदर्शन प्राप्त कर सकेंगे।

५) स्वयं शिविर में अन्य सभी सुविधायें उपलब्ध रहेंगी।

व्यवस्थापक

विशेष-सूचना

१) 'विपश्यना' पत्रिका का शुल्क-वर्ष **जनवरी से दिसम्बर** तक निर्धारित किया हुआ है। अतः वार्षिक शुल्क देने वाले साधक इस वर्ष के लिए अपना शुल्क कृपया एक-दो महीने के अंदर ही भेज दें ताकि हमें हिसाब रखने में सुविधा हो।

२) कुछ व्यवहारिक कठिनाइयों के कारण 'विपश्यना' भेजने की व्यवस्था फिलहाल विपश्यी साधकों तक ही सीमित है। अतः अन्य नव आकांक्षी (जो विपश्यी साधक नहीं हैं) कृपया अपना शुल्क न भेजें।

३) मनी आर्डर अथवा पत्रिका संबंधी अन्य पत्राचार बम्बई के पते पर न करके नीचे लिखे विद्यापीठ के पते पर इगतपुरी ही करें :-

व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि,
इगतपुरी-४२२४०३ (नासिक)

४) मनी आर्डर फार्म पर अपनी **साधक-संख्या** लिखना न भूलें अन्यथा 'साधक' होने की पुष्टि न होने कारण मनी आर्डर वापस लौट सकता है।

५) जो साधक हैं उनके **नाम-पते के आगे** साधक/ग्राहक-संख्या (जैसे-१८३/१३ श्री....) लिखी रहती है। कृपया अपनी प्रति के ऊपर चिपकाए पते को देखकर **'नोट'** कर लें और भविष्य में **पता बदलने** अथवा अन्य किसी प्रकार के पत्राचार के समय यह **ग्राहक-संख्या** लिखनी न भूलें। अन्यथा उस पर कोई ध्यान दिया जा सकना असंभव होगा।

६) जिस साधक के पते के साथ 'ग्राहक-संख्या' न लिखी हो, कृपया निम्न विवरण भेजकर मालूम करें :-

अ) सर्वप्रथम सम्मिलित होने वाले शिविर की संख्या :

ब) समय (तिथि, माह व वर्ष) :

स) और स्थान (शिविर-स्थल)

७) बार-बार पता बदलने की सुविधा हमारे पास नहीं है अतः जहाँ तक संभव हो अत्यधिक स्थाई पते पर ही पत्रिका मंगाएं। यदि थोड़े समय के लिए पता बदल रहे हों तो कृपया पुराने पते से ही रि-डाइरेक्ट करवाने की व्यवस्था स्वतः करा लें।

भवतु सब्ब मंगलं

★

क्षमा-याचना

किन्ही अपरिहार्य कारणों से गत कार्तिक पूर्णिमा (नवम्बर) का विपश्यना अंक छपकर भी समय पर नहीं भेजा जा सका जिसे कि भविष्य में कभी अलग से या किसी अन्य अंक के साथ पोस्ट कर पायेंगे। मार्गशीर्ष पूर्णिमा (दिसम्बर) का अंक भी समय पर प्रकाशित न हो सका, इसका बड़ा खेद है। इस निमित्त हुई असुविधा के लिए पाठक कृपया क्षमा करेंगे। **(सं.)**

आगामी शिविर

शिविर क्रमांक : १७१ हैद्राबाद (वि. अं. सा. कें.) दि. ४--१--८० से १४--१--८० तक (हिंदी)
सम्पर्क : श्री रतीलाल एम. मेहता द्वारा विपश्यना अन्तरराष्ट्रीय साधना केन्द्र, कुसुम नगर, हैद्राबाद--५०००३५ (आँ. प्र.) फोन ५९२५१

पुज्य गुरुजी का **स्वयं-शिविर : इगतपुरी** दि. १९--१--८० से ३०--१--८० तक (प्रतिबंधित) (केवल स्वीकृति-प्राप्त पुराने साधकों के लिए)
शिविर क्रमांक : १७२ **: इगतपुरी** दि. १-२-८० से १२-२-८० तक (अंग्रेजी)
लघु शिविर : इगतपुरी दि. १२-२-८० से १७-२-८० तक (मां सयामा के संरक्षण व निर्देशन में)

सम्पर्क : व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३ (नासिक-महाराष्ट्र) फोन : इगतपुरी ७६.

सूचना : १) कृपया साधना शिविर में शामिल होने से पूर्व शिविर-व्यवस्थापक के पास अपना नाम रजिस्टर करा लें। **किसी कारणवश शिविर में सम्मिलित न हो सकते हों तो कृपया पर्याप्त समय रहते सूचित करें ताकि किसी अन्य प्रत्याशी को स्वीकृति दी जा सके।**
२) अंग्रेजी शिविर में हिन्दी-प्रवचन सुनने लिए हिन्दी टेप की सुविधा उपलब्ध रहती है।
३) शिविरों के नियम कड़े होते हैं। उनका कड़ाई से पालन कर सकें तो ही भाग लेना चाहिए।

मेसर्स बॉम्बे होटल फोन नं. २५
आगरा रोड, इगतपुरी-४२२४०३.
(नासिक - महाराष्ट्र)
की मंगल कामनाओं सहित।

मेसर्स बसंतलाल जटिया एण्ड कं. फोन २५५०८२
२५/३१, डॉ. आत्माराम मर्चन्ट रोड, भुलेश्वर,
बम्बई-४०० ००२.
की मंगल कामनाओं सहित।

दूहा धरम रा

अपणा दुखड़ा आप सह, मत औरां नैं बांट।
औरां की पीड़ा बढ़ै, तेरी घटै न छांट ॥
दुख आयां धीरज धरै, दुख अनंत ना होय।
संकट का दिन चार है, पुन्य उदय पुनि होय ॥
जै चित चावै आसरो, तज दे सून्य असार।
एक आसरो धरम को, मंगल को आधार ॥
बारै बारै भटकतां, तन मन सुलगी ताप।
कद अन्तरमुख होवस्यूं, कद मिटसी संताप ?
बै घड़ियां कद आवसी ? बंधन जासी छूट।
पीड़ा मिटसी पीप की, फोड़ो जासी फूट ॥
बो दिन बेगो आवसी, गांठ्यां जासी खुल्ल।
दुखड़ा मिटसी करम का, चित होसी परफुल्ल ॥

दोहे धरम के

अहो महासुख! परमसुख! अनुपम सुख निर्वाण!
फीके सारे राजसुख, धन्य! धरम सुख ध्यान!!
धनमद पदमद मानमद, सत्तामद उन्माद।
होश न जागे धरम का, छाए प्रबल प्रमाद ॥
होश जगे जब धर्म का, होवे दूर प्रमाद।
स्वदर्शन करते हुए, चखे मुक्ति का स्वाद ॥
धन वैभव ऐश्वर्य के, भले लगे अम्बार।
इस नश्वर उपभोग में, कहाँ अमर सुख सार ?
आँख मूंद अन्तरमुखी, बैठे शून्यागार!
देखत देखत वेदना, मिले सुखों का सार ॥
तनसुख मनसुख मोहसुख विभ्रममय विभ्रांति।
समतासुख निर्वाणसुख, देवे निर्मल शांति ॥

सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक **: रामप्रताप यादव,** ग्रीन हाऊस, २ री मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट, बम्बई २३. टेलीफोन : ३१३५१०. ● मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपुर, नासिक ४२२ ००७. टेलिफोन ८२५१ ●
पत्रिका में विज्ञापन दर : आधा पृष्ठ रू. ४००/-, चौथाई पृष्ठ रू. २०० /- ● वार्षिक शुल्क रू. ५/-, आजीवन शुल्क रू. ५१/-

"विपश्यना"
पो. रजि. नं. NSK-64

प्रेषक :
सयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट
विपश्यना विश्व विद्यापीठ
धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३.
(नासिक, महाराष्ट्र)

To